अशान्ति में

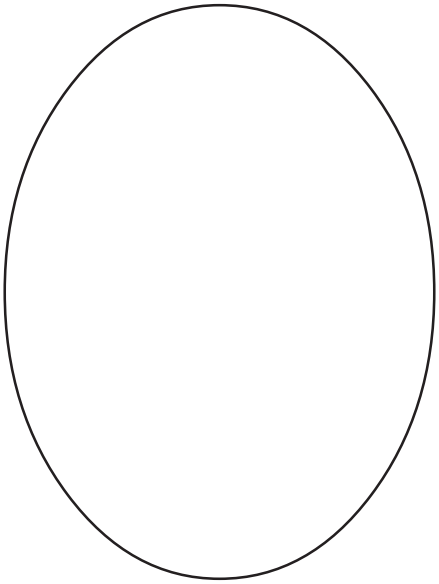

स्वामी रामानन्द

"स्वीकार करो सभी कुछ उसी से।
उसी के आगे उड़ेल दो सभी कुछ। सभी थाहों
को प्रभु चरणों में रख दो, फिर चैन होगी।"

अशान्ति में

स्वामी रामानन्द

साधना कार्यालय
स्वामी रामानन्द साधना-धाम
कनखल (हरिद्वार)

पंचम् संस्करण - अगस्त 2000
षष्ठम् संस्करण - मार्च 2012
सप्तम् संस्करण - दिसम्बर 2017

1000 प्रतियाँ

मूल्य: सप्रेम भेंट

© सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशक:
साधना परिवार
स्वामी रामानन्द साधना धाम
संन्यास रोड, कनखल, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)-249408

कम्पोजिंग:
ग्रेटो इंटरप्राइजेज़
जी-30, सरिता विहार, नई दिल्ली-110076, दूरभाष: 9910794578

मुद्रक:
रैक्मो प्रैस प्राइवेट लिमिटेड
सी-59, ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया फेज़-1, नई दिल्ली-110020

श्री राम

दो शब्द

साधना में समुचित मनोवृत्ति - ठीक समझ जितने महत्व की है, सम्भवतः उतनी कोई दूसरी बात नहीं। कोई विपत्ति आती है, सामान्य साधक घबरा जाता है, अशान्त हो उठता है, परन्तु उसकी विपत्ति को अन्य ठीक समझ रखने वाला साधक हँसते-हँसते पार कर लेता है। उसे विपत्ति, विपत्ति सी नहीं लगती, कठिनाई, कठिनाई सी नहीं लगती। क्या है ठीक समझ अशान्ति के प्रति, विपत्ति के प्रति? कैसे स्वीकार करें परेशानियों को? सामान्य साधक सहज में पूछ बैठता है। प्रस्तुत पुस्तिका, जो कि श्री स्वामी जी के पत्रों से किया गया एक संकलन मात्र है, इस विषय पर संक्षेप में प्रकाश डालती है। विपत्तियों के प्रति तथा अशान्ति के समय साधक के भीतर समुचित मनोवृत्ति उत्पन्न करने में यह पुस्तिका विशेष सहायक सिद्ध होगी, इसी आशा से मैंने यह प्रयत्न किया है। यदि किसी को भी इससे शान्ति मिल सके तो मैं इस प्रयास को सफल समझूँगा।

झाँसी
30.4.1951

श्री गुरु चरणों में,
एक साधक

(5)

श्री राम

अशान्ति में

प्रभु की शरण हो जाइयेगा। बजाय अपनी फड़फड़ाहट के उस मालिक के आगे माथा टेकियेगा। अपनी सभी इच्छायें, अपनी चिन्तायें, अपनी रुचियाँ, सभी कुछ उसके चरणों में रखकर उसके ही हो जाने की चाह रखियेगा, फिर उसकी कृपा बरसेगी, सभी भीतर तथा बाहर की बाधाएँ ढेर हो जायेंगी, अशान्ति मिट जायेगी, तन और मन को शान्ति मिलेगी।

◆❑◆

आदमी के प्रारब्ध के लेखे में हानि तथा लाभ दोनों ही रहते हैं। सुख भी होते हैं और दु:ख भी, और हमारी अक्ल ठिकाने लगाने के लिये दोनों की ही आवश्यकता रहती है। हानि तथा दु:ख के बिना तो माथा झुकाना भी नहीं आता, और न पता ही चलता है कि मियाँ जी अभी कितने पानी में हैं। प्रारब्ध के भोगने के साथ ही साथ व्यक्ति

(6)

साधना में भी अग्रसर हो सकता है। पहले-पहले परेशानियाँ हुआ करती हैं, फिर स्थिरता आ जाती है। घबराओ नहीं। ऐसे ही दिन हमेशा न रहेंगे। वर्तमान घटनाओं की अपनी उपयोगिता है। जो पाठ यह पढ़ा सकती है, पढ़ लो। जितनी जल्दी पढ़ लोगे, उतनी ही जल्दी परेशानी दूर हो जायेगी।

'गइया मर गई, सौ रुपये चोरी हो गये'। कोई बात नहीं भइया। लोगों की मुसीबतों का ख्याल करो जरा। पाकिस्तान से आये थे 'लाखों वाले' बेघरबार होकर, और वे भी जीते हैं। जिसकी सब वस्तुयें हैं उसे लेने का अधिकार भी तो है। अपना समझते हो तभी तो रोना आता है। ठीक देखो, ठीक समझो, घबराहट न होगी।

यह आशा-निराशा का, चिन्ता का, उद्वेग का अन्तर-मन्थन कैसा विचित्र होता है? देवी! देखती हैं आप इसको? और बाहर का संघर्ष और क्लेश कितना विचित्र होता है! यह दोनों ही एक दूसरे के रूप प्रतिरूप होते हैं। हृदय कैसे उतावला हो जाता है और अपनी थाह खो देता है? विश्वास भी डिग जाता है कि इस सभी के पीछे उस मंगलमयी का मंगलमय हाथ है। विपदा ही विपदा दीखती है और 'हाय! कुछ हो जाय!' बस, यही हूक उठती है

(7)

और अहं चिल्लाता है, जो माँ को जानता नहीं, जो उसके सम्मुख नहीं हो पाता, वह उसकी कृपा से शुद्ध नहीं हुआ। हमारे समर्पण की थाह भी मिलती है ठीक ऐसी परिस्थिति में और ऐसी ही स्थिति में भीतर के बन्धन कटते हैं। माँ मंगलमयी शान्तिमयी बड़ी स्थिरता से, बड़ी होशियारी से कार्य करती हुई दीख जाती है। निहाल हो जाता है जिसे यह सौभाग्य प्राप्त होता है।

धैर्य धरो, विश्वास करो, चेष्टा करो। संस्कार का क्षय प्रगति के लिए आवश्यक है। दिन बदला करते हैं। भीतर बाहर बदला करते हैं, संस्कारों का क्षय होते ही।

◆❑◆

क्या प्रबल आसक्ति नहीं इस परेशानी और भय के पीछे? उस परेशानी को, भय को और मूलभूत आसक्ति को क्यों न प्रभु के चरणों में रख दिया जाय और उसे पुकारा जाय? आप के बस का जो नहीं है, वह उस मालिक के बस का है। वह क्षीण कर सकता है बन्धनों को। उसकी कृपा तो निर्मल कर देती है, ऊँचा कर देती है। सिर झुकाकर उसके सम्मुख हो जाना चाहिये और विश्वास करना चाहिये। सभी ठीक कर देगा। बस, और क्या किया जा सकता है?

सहना भी वह सिखा देगा, यदि हम ऐसी माँग करें। एक होता है सहन करना, एक होता है प्रतीत ही न करना, उससे ऊपर ही रहना, बुरा ही न मानना। यह समस्थिति है। माँ से इस बात की माँग करें, वह आ जायेगी।

प्रभु की लीला विचित्र है। घबराने से तो बात बनती ही नहीं। जन्म जन्मान्तर से हमें सभी तरह के अनुभव करने होते हैं। छटपटाने से तो बात बनती नहीं। खाली परेशानी होती है। जो भोगना है सो भोगना ही है। हँस हँस कर भोगें तो, और रो रो कर भोगें तो। घर की बातें सोचकर परेशान होना तो एक दर्जे की मूर्खता ही है। यह घर उसके चरणों में रख दीजिये। अपनी मान मर्यादा को भी वहाँ ठेल दीजिये। हल्की हो जाइयेगा। जो वह कहे वही करिये। बस, और आपकी फिर कोई जिम्मेदारी ही न रहेगी। सोच कैसा? जब तक इतना बड़ा भीतर का त्याग हो नहीं जाता शान्ति कैसे हो? अलग हो जाने से क्षणिक तसल्ली होगी, भीतर का बन्धन नहीं कटेगा। वह चाहे तो ले जाए अकेले में भी, न चाहे तो न ले जाए। जब ठीक समझेगा, न चाहने पर भी वह ले जायेगा। प्रभु को इस तरह प्रतिष्ठित कर देने से जीना अर्थवान् हो जाता है। अन्यथा अपनी दौड़ कहाँ तक?

(9)

क्या उस मालिक के खेल के आगे अभी सिर झुका नहीं? किधर की कल्पना करती करती किस किनारे पर आ लगी हैं? इसके पीछे भी यदि उसका हाथ दिखाई पड़ता है और उसी के आश्रित हो जाता है अन्तरात्मा, तो ठीक है और अगर बगावत होती है तो गलत है। 'मैं कर सकती हूँ, मैं कर लूँगी' यही इस परेशानी के मूल में है।

स्वीकार करो सभी कुछ उसी से। उसी के आगे उड़ेल दो सभी कुछ। सभी थाहों को प्रभु के चरणों में रख दो। फिर चैन होगी।

◆❑◆

जीवन परेशानियों का घर है ही। हर एक व्यक्ति के जीवन में ऐसी बातें चला करती हैं। किसी में अधिक होती हैं किसी में कम। कोई उनको अधिक मानता है, कोई हँसी हँसी में ही पार कर जाता है। परेशानियाँ वास्तव में हमारे बाहर नहीं भीतर होती हैं। हमारी असल परेशानी यह नहीं कि हमारे लड़के बाले कष्ट में हैं, परन्तु यह है कि वह हमारे हैं। ममता – लगाव ही हमारी परेशानी है। काम क्रोध ही वास्तविक परेशानी है। जब आप परेशानी को बाहर न देखकर भीतर ही देखने लगेंगी, रास्ता साफ होने लगेगा।

◆❑◆

(10)

जब तक आप अपनी बाहर की परिस्थिति को भगवान का विधान समझकर प्रसन्नता पूर्वक नहीं स्वीकार कर लेतीं, प्रभु की ओर मन लगे कैसे? उसी की आज्ञा का हम उल्लंघन कर रहे हैं। उसी के विधान का हम निरादर करते हैं, तो उसकी ओर हम चैन से जा कैसे पायेंगे? यह मौलिक विरोध ही तो परेशानी करता है। सिर झुकाओ, 'राज़ी हूँ मैं उसी में जिसमें तेरी रज़ा है' ऐसा भीतरी दिल से कहो। परिस्थिति को साधना का स्वरूप और क्षेत्र मानकर चलो। उसमें भी प्रभु की कृपा देखो। फिर कितनी जल्दी भीतर और बाहर की परेशानियाँ दूर होती हैं, यह आप ही जान पायेंगी।

◆❑◆

प्रभु की इच्छा के आगे माथा टेकना भी तो तभी आता है, जब कुछ हमारी इच्छा के प्रतिकूल घटता है। संस्कारों को तो भोगना ही होता है। यदि हम सभी कुछ सहर्ष भोगने को तैयार हो जायें यह विचार कर कि कर्म का कर्ज़ा चुकाना है, तो यह सब चलता है। साथ में दृढ़ता भी आती जाती है। वास्तव में यह सारा विधान हमें बहुत से बहुमूल्य पाठ पढ़ाने को होता है। बाहर का संघर्ष भीतर की ओर धकेलता

है व्यक्ति को। इससे लाभ उठाकर व्यक्ति प्रभु के समीप होना सीखता है।

जब भीतर व्याकुलता हो तो उसके पीछे भी प्रभु की शक्ति को देखें। यह भी उसी की दी हुई है और उसी के चरणों में रख दें। फिर जल्दी ही शान्ति हो जायेगी। भीतर शान्ति के पीछे, आनन्द के पीछे, व्याकुलता के पीछे – सभी अनुभूतियों के पीछे मालिक के ही हाथ को देखना चाहिये। किसी भी अनुभूति के लिए इच्छा न करनी चाहिये। भीतर से चाह हो तो उसे प्रभु के चरणों में रख देना।

जब परेशानी हो, जब कोई रास्ता न सूझता हो, तो जरा मेरी याद कर लिया करियेगा। मुझे लिख भेजा करियेगा नि:संकोच। मैंने ऐसा देखा है कि ऐसा करने का परिणाम होता है परेशानी का दूर होना। मैं स्वयं नहीं जानता हूँ कि यह क्योंकर होता है, परन्तु होता अवश्य है, यह मैंने देखा है।

◆❑◆

यदि आवेश हो, उद्वेग हो, तो माँ के सम्मुख हो जाया करियेगा। उसकी समीपता का भान करियेगा। वह पुकारने

से होगा। उससे ऊँची चेतना जगेगी। विचारों के जगत में इसका हल हो नहीं सकता। माँ के सम्पर्क से तो तत्काल हो ही जायेगा।

◆❑◆

यदि आज वातावरण अनुकूल नहीं है तो घबराना नहीं चाहिये। यह भी हित के लिये भगवत-विधान है। प्रतिकूल वातावरण में लगन पक्की हो जाती है, अपना दिमाग और दिल भी साफ हो जाता है। छिपी हुई कमज़ोरियाँ प्रकट हो जाती हैं। हम भगवान को जीवन में क्या स्थान देते हैं, यह भी समझ में आने लगता है। हमारी शान्ति और प्रेम की पल-पल होने वाली परीक्षा हमें पक्का कर डालती है। अत: यदि हममें लगन हो तो हम अधिक तेज़ी से प्रभु के चरणों की ओर बढ़ सकते हैं।

प्रतिकूल वातावरण में प्रतिकूलता की परवाह न करनी चाहिये। यह सोचते न रहना चाहिये कि वातावरण प्रतिकूल है। अपना स्वास्थ्य आदि बातों का ख्याल रखते हुये साधन के लिये अधिक समय लगाना चाहिये। डर जाना कायरता है और साधक को पथभ्रष्ट कर सकता है। साधन करना कोई पापाचरण नहीं है। इसके लिये डर क्या?

◆❑◆

(13)

आपकी शान्ति की समस्या निश्चित रूप से हल हो जायेगी, परन्तु आपके सहयोग की आवश्यकता है। जैसे आकुलता के आगे आप सिर झुकाये चली जा रही हैं, उससे तो आपका लक्ष्य और भी दूर भाग जायेगा। भीतर की व्याकुलता आपकी अनुमति से ही आपको परेशान करती है।

उस व्याकुलता को विश्वास के द्वारा और दृढ़ संकल्प के द्वारा शान्त किया जा सकता है इस बात का मुझे पूरा विश्वास है। यदि आप यह समझ लें कि यह व्याकुलता सचमुच आप में उद्वेग पैदा करती है और उस अवस्था से नितान्त दूर है जिसमें प्रभु का प्रकाश होता है तो संकल्प जग सकता है कि यह शान्त हो जानी चाहिये। वह व्याकुलता मीठी लगती है। आप पूछेंगी उस मिठास के लिये क्या करें। वह मिठास जो लक्ष्य से दूर ले जाये, भले ही कितनी प्यारी क्यों न हो, त्याज्य ही है। अतः उसे छोड़ना चाहिये। यहाँ संकल्प की आवश्यकता है।

शरीर को कह दीजियेगा 'शान्त, स्वस्थ, सबल रहो, तुझे बहुत काम करना है। तेरे मन्दिर में रह कर, देव में घुल मिलकर एक हो जाना है मुझे।'

(14)

हृदय से कह दीजिये 'व्याकुल होने की आवश्यकता नहीं। तेरी माँग पूरी हो जायेगी। इतना उतावला होकर तो उस माँग की पूर्ति की सौम्यता और सरसता को बिगाड़ रहा है। अपनी निर्भरता के अभाव का परिचय दे रहा है।'

मस्तिष्क को कह दीजिये 'उड़ानें भरनी बन्द कर दो। सभी समस्याएँ और इसका हल स्वयं प्रभु ही हैं। तू शान्त हो जा उसमें बस'।

शक्ति-मैया से कह दीजिये, हृदय पर हाथ रखकर, सिर पर हाथ रख कर 'माँ सौम्यता से, शान्ति से, गम्भीरता से, कोमलता से, ले चलो, माँ।'

अन्तरात्मा तो प्रभु से युक्त है ही। ज़रा अपने भीतर इस मन, बुद्धि की आवश्यकता से परे देखियेगा तो सही। हम उसी में रहते हैं, निश्चित रूप से। और ऊँचे से देख पायेंगी तो इस परेशानी के पीछे भी वही दीखने लगेगा।

◆❑◆

वास्तव में जिस प्रकार आप वर्तमान में चलायमान हो रही हैं यह तो आपको भीतरी सौम्य प्रतीति से दूर कर रहा है। धैर्य करना होगा। बलात् करना होगा धैर्य, अपने

अन्तरात्मा को समझा कर, हृदय को थाम करके।

यदि आप सचमुच चाहें और धैर्य से भीतर को स्थिर करना चाहें तो वह हो जायेगा। यह परेशानी व्यतीत हो जायेगी। आपका मार्ग खुल जायेगा।

आपकी वर्तमान स्थिति को जानकर तो मुझे यही कहते बनता है कि साधुसंग करना बन्द कर दीजियेगा। अपना व्यक्तिगत साधन करियेगा और सत्संग-घर में भी सीमित समय लगाइयेगा। आपके ऊपर बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। समाज में भी अधिक शान्ति तथा स्थिरता आनी चाहिये और गृहस्थों में भी अधिक सौम्यता आपके सम्पर्क से। जो कोई वायदे आपने कर रक्खें हों साधु-संगत के बारे में उनको भी मत निभाइयेगा। उसके लिये मैं ही सभी दोष और पाप को उठाने की जिम्मेदारी लेता हूँ।

बच्चों के प्रति जो आपकी महान् ज़िम्मेदारी है उससे आपको भली भाँति निपटना ही है। यह आपका प्रभु के प्रति कर्तव्य है। आपके संस्कारों की भी माँग है। इसे भली प्रकार समझ लीजियेगा।

◆❑◆

(16)

चातुरी चलाने की चेष्टा न करियेगा। कठिनाई हो, घबराहट हो तो उसके सामने रख दीजिये, जैसे बच्चा माँ के सामने रख देता है। ऐसे दिल खोलने लगेंगी तो कठिनाइयाँ आपकी न रहेंगी। वह प्रभु की हो जायेंगी और वह जो हितकर समझेगा (आपके लिये) उनका हल निकालेगा। अपने हल, अपनी इच्छायें, अपनी रुचियाँ और अपनी सभी स्कीमें उसी के चरणों में रख दीजियेगा। वह पथ-प्रदर्शन करेगा। पथ-प्रदर्शन ही नहीं करेगा, वह रास्ते पर साथ होकर ले चलेगा - हाथों में उठाकर भी। उस पर विश्वास रखिये। वह हमारी सुनता है - यह मत भूलिये। इसलिये पुकारिये, परन्तु अपनी इच्छाओं को उस पर मत आरोपित कीजिये।

◆❑◆

"जो बात समाज के लिए सत्य है वही गृहस्थ-जीवन में भी सत्य है। पत्नी यदि पति के अधीन है तो पति भी पत्नी के अधीन है।

यदि पति अपनी स्त्री को अपनी पूँजी समझता है अथवा पत्नी अपने पति को अपनी पूँजी समझती है, तो दोनों ही इस नाते को भली भाँति नहीं समझे हैं। स्वतन्त्रता के आधार पर प्रीति हो सकती है। परतन्त्रता के आधार पर पाशविक कामुकता ही सम्भव है।

स्त्री पुरुष एक दूसरे के पूरक हैं, अतः समान हैं, समरूप से आदर-पात्र हैं, भागवत-योग में सहधर्मी हैं। स्वातन्त्र्य प्रेम तथा विकास की आवश्यकता है। गृहस्थ सौम्य स्वातन्त्र्य की आधार-शिला है।"

स्वामी रामानन्द

(जीवन रहस्य से)